**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

# पूर्व मध्यकाल में दासों की स्थिति : एक अवलोकन

डॉ. कहकशाँ प्रवीण

नालन्दा महिला कॉलेज, बिहारशरीफ

भारतीय समाज में दासता एक प्रथा के रूप में प्राचीन काल से ही विद्यमान है। दासता वह संज्ञा है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के अधीन हो जाता है। ऋग्वेद का दास शब्द आर्यो के शत्रुओं के लिए प्रयुक्त हुआ है यह सम्भव है कि जब दास लोग पराजित होकर बंदी हो गये तो वे गुलाम के रूप में परिवर्तित हो गये ।[1] इस दासता का मूल युद्ध है। विजेता पराजित व्यक्तियों को पूर्णतया अपने अधिकार में कर लेता था बाद में ऋण न चुका सकने पर, शर्त हार जाने पर, या अकाल की अवस्था में भरण-पोषण में असमर्थ व्यक्ति दूसरों के दास बन जाते थे।[2]

इस विवेच्य काल में भी अधिकतर दास घर का काम-काज करते थे। मेघातिथि (825 ई. से 900 ई.) ने सेवक के कार्य को परिचर्या कहा है और दासों के कार्य के अंतर्गत निकृष्ट कर्म करना और जहां स्वामी भेजें वहाँ जाना लिखा है। परिचर्या के अंतर्गत मालिश करना, परिवार और संपत्ति की देखभाल आदि काम लिखे हैं । विज्ञानेश्वर (1070 ई. से 1100 ई.) ने भी उक्त भेद को स्वीकार किया है। अपरार्क (लगभग 1224 ई.) तथा देवलभट्ट (1150 ई. से 1225 ई.) ने भी भृत्य और दास के उपर्युक्त भेद को माना है । इससे स्पष्ट है कि इस काल में अधिकतर दासों से निकृष्ट काम ही कराया जाता था विवेच्ययुगीन लेखक सोमदेव ने 'कथासरित्सागर' में दास प्रथा का वर्णन किया है। कथासरित्सागर में एक वणिक द्वारा पाटलिपुत्र से अनेक दासियों को क्रय करने का संदर्भ प्राप्त होता है।[3] कभी-कभी दासियों से श्रमिक अथवा ब्राह्मण विवाह कर लेते थे। हेमचन्द्र ने भी अनेक प्रकार के दास-दासियों का वर्णन किया है ।[4] याज्ञवल्क्य स्मृति के टीकाकार विज्ञानेश्वर ने पन्द्रह प्रकार के दासों का उल्लेख किया है- गृहजात (घर की दासी से उत्पन्न), क्रीत (खरीदा गया), लब्ध (दान आदि से प्राप्त), दायादुपागत (बंश-परंपरागत), अनाकालभृत (दुर्भिक्ष में मरने से रक्षित), आहित (धन देकर अपने पास रखा हुआ), ऋणदास (कर्ज में रखा गया), युद्ध प्राप्त (युद्ध में पकड़ा गया), पणेजित (जुए आदि में जीता हुआ), उपगत (यों आया हुआ), प्रव्रज्यावसित (साधु होने के बाद बिगड़कर दास बना हुआ), बड़वाहृत (घर की दासी के लोभ से आया हुआ) और आत्म विक्रेता ( अपने आपको बेचने वाला) ।[5]

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

इस काल की विषम राजनीतिक-आर्थिक परिस्थितियों ने बहुसंख्यक जनों के समक्ष जीवन रक्षा का प्रश्न खड़ा कर दिया था जिससें विवश होकर उन्हें दासत्व स्वीकार करना पड़ा। यह युग राजनीतिक अशांति तथा युद्धों का काल था, परिणामतः युद्धबंदी दासों की संख्या में विशेष रूप से वृद्धि हुई ।[6] भारतीय शासक जब एक-दूसरे के राज्यक्षेत्र पर आक्रमण करते थे तो न केवल संपत्ति लूटते थे: वरन् युद्धबंदियों को दास भी बनाते थे । मुसलमान शासकों में दास रखने की प्रथा संभवतः और अधिक लोकप्रिय थी। मुस्लिम आक्रमणकारियों को भारतीय राजाओं पर जब भी निर्णायक विजय प्राप्त हुई, बहुसंख्यक हिन्दू गुलाम बनायें गयें । 1192 ई. में मुहम्मद गोरी द्वारा पृथ्वीराज के पराजित होने पर अजमेर के बहुसंख्यक असहाय नागरिकों को बंदी बनाकर बेच दिया गया था।[7] कहा जाता है कि कालिंजर के पतन के पश्चात् कुतुबुद्दीन ऐबक ने 50 हजार हिन्दुओं को दास बनाया था ।[8] युद्ध के अतिरिक्त दरिद्रता, दुर्भिक्ष एवं आर्थिक शोषण के कारण अनेक व्यक्तियों के दास बन जाने के उदाहरण इस काल में मिलते हैं । अकाल की इस स्थिति में बहुत से लोग उदरपूर्ति के लिए दासत्व स्वीकार कर लेते थे। प्रबोध चन्द्रोदय[9] नाटक में बिना मूल्य के प्राप्त दासों का उल्लेख है।

दासों को उपहार में देने की प्राचीन प्रथा का उद्वहन भी इस काल में दृष्टिगत होता है। सोमदेव भट्ट ने राज्यधर नामक एक व्यक्ति की चर्चा की है, जो अपने अग्रज प्राणधर को दास कथाएँ भेंट करता है। मानसोल्लास दास का उपहार देने की प्रथा को समर्थन करते हुए उसे गृह, ग्राम, भूमि, दासी, कन्या, अन्न-पान, तिल और औषधि जैसी उपहार योग्य वस्तुओं की श्रेणी में रखता है ।[10] ऐसा प्रतीत होता है कि आचार-व्यवहार में दास-दासियों को अतिथियों, अधिकारियों एवं मंदिरों में भेंट-स्वरूप देने की मान्यता थी।

दासों के साथ व्यवहार के प्रश्न पर मेघातिथि (825-900 ई.) के अनुसार स्वामी को अपने दास, उसकी पत्नी और पुत्र से अच्छा व्यवहार करना चाहिए। उसने लिखा है कि मनु ने जो यह लिखा है कि दास का भी संपत्ति पर अधिकार है। [11] मानसोल्लास में कहा गया है कि स्वामी को दासों का पालन-पोषण एवं रक्षण तो करना ही चाहिए साथ ही उन्हें दान एवं सम्मान से संतुष्ट भी करना चाहिए । दोषी दासों के साथ प्रायः उसी प्रकार के कोमल दण्ड की व्यवस्था की गयी, जो पत्नी, पुत्र, भगिनी, शिष्य, वधू और अनुज को दिया जाता था। उन्हें केवल पीठ पर रस्सी अथवा छड़ी से मारने का निर्देश है, सिर पर प्रहार वर्जित था। अतएव ऐसा करने वाला व्यक्ति राजा द्वारा दण्डनीय समझा जाता था। दासों के प्रति क्रुरता का व्यवहार करने वाले को चोर के समान दण्डनीय माना गया । बिल्हण ने राजकुमारियों को दासियों के साथ क्रीड़ा करते हुए दिखाया है। हर्षचरित, नैषधचरित आदि समकालीन ग्रंथों में राजकुमारियों की परिचारिकाएँ उनकी विश्वस्त एवं प्रिय सखियों जैसी

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

लगती हैं । इन सब सन्दर्भों से यह संकेत मिलता है कि सहृदय स्वामी एवं स्वामिनी दास-दासियों के साथ उदार व्यवहार करते थे।

सर्वाधिक दुर्दशा दासियों की थी। भागने वाली, चोरी करने वाली, स्वामी और उसके सम्बंधियों के आदेशों की अवहेलना करने वाली तथा निंदा करने वाली दासी को स्वामी बांध और पीट सकता था । लेखपद्धति से ज्ञात होता है कि जब दासियाँ अतिशय प्रताड़नाओं से टूट जाती थीं तो तालाब या कुएं में कूदकर आत्महत्या कर लेती थी।[12] दास-दासियों के साथ व्यवहार उनके स्वामी के स्वभाव पर भी बहुत कुछ निर्भर था।

दासों एवं दासियों को बहुधा कार्य करने पड़ते थे। उनके कर्तव्यों में उनके स्वामियों के पेशे एवं स्तर के अनुकूल अन्तर आता था। तत्कालीन सामंतों एवं भू-सम्पत्ति पर प्रचुर स्वायत्त अधिकार प्राप्त थे, अतएव वे अपने दासों से कृषि कार्य करवाते थे । हेमचन्द्र ने कृषि कार्य में संलग्न दासों का उल्लेख किया। इस काल में उन्हें मल-मूत्र हटाने का गन्दा एवं जुगुप्सापूर्व कार्य भी करना पड़ता था ।[13] राजकुलों सामंत परिवारों की दासियां स्वामी के विलास की व्यवस्था करती थी। राजाओं के अंतःपुर में बहुत बड़ी संख्या में दासियों की उपस्थिति समकालीन ग्रंथों से प्रमाणित होती है। साहसी और बहादुर दासियाँ अन्तःपुर की रक्षक नियुक्त की जाती थी। दास-दासियों पर प्रभुत्व के कारण स्वामी स्वेच्छानुसार उनका उपयोग करता था । जो दासियाँ अपने स्वामी के विलास का साधन बनती थी, वे अपने आपको सौभाग्यवती समझती थी । अन्य दास-दासियों की तुलना में उन्हें विशिष्ट सुविधाएँ प्राप्त होती थी।

दासों को गाय-बैल, सोना चाँदी, वस्त्र- आभूषण आदि की भाँति ही अपने स्वामी की सम्पत्ति समझा जाता था। [14] मेधातिथि का कहना है कि एक दास को केवल वस्त्र और भोजन मिलना पर्याप्त है। विवेच्य काल में दासों का नियमित व्यापार भी होता था । भारतीय दासों को विदेश भेजने की प्रथा भी प्रचलित थी।[15] राजतरंगिणी में भी भारतीय दासों को म्लेच्छों के हाथ बेचने की चर्चा मिलती है । बहुत से ऐसे व्यापारी थे, जो विदेशों से दास-दासियों का आयात करते थे।

दासता से मुक्ति के सम्बन्ध में समकालीन साहित्य और अभिलेख प्रायः मौन है । दासों की मुक्ति के समर्थक साक्ष्य अत्यन्त विरल है। इसके बावजूद नारद स्मृति में तो यहाँ तक कहा गया है कि यदि दास अपने स्वामी को किसी आसन्न प्राण संकट के समय बचा लेते हैं तो उन्हें दासता से मुक्त कर दिया जाय, साथ ही उन्हें पुत्र की तरह जायदाद में हिस्सा भी दिया जाय । जो कर्ज आदि लेकर दास बनते थे, वे स्वामी से लिया हुआ सब ऋण चुकता कर जब चाहे मुक्त हो सकते थे। कभी-कभी स्वामीगण भी प्रसन्न होकर या

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

दया के कारण उन्हें मुक्त कर देते थे, किन्तु अधिकांशतः दासों की मुक्ति लगभग असम्भव थी।

विवेच्यकालीन दासों की स्थिति के सम्बंध में कुछ बातें विशेष रूप से हमारा ध्यान आकृष्ट करती है, जिनमें इस काल में अनवरत युद्धों, समाज के निम्न वर्गों की आर्थिक विपन्नता, सामंतवादी प्रवृत्ति के विकास तथा ब्राह्मण भू-स्वामियों की संख्या में वृद्धि के कारण दासों की संख्या में अतिशय वृद्धि होती है । कृषि दासों की संख्या में भी वृद्धि होती है दास-दासियों को मल-मूत्र निस्तारण आदि में लगा हुआ पाते हैं, साथ ही दास-दासियों का खुला व्यापार तथा मानवीय स्तर पर उनके प्रति संवेदना का सर्वथा अभाव भी विवेच्य युग में उनकी दयनीय स्थिति की ओर ही संकेत करता है।

सन्दर्भ :

1, काणे, पी.वी. : धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग-1, पृ. 172.
2. ओमप्रकाश : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ. 117.
3. कथासरित्सागर, 1, पृ. 92.
4. त्रिशप्टिशलाकापुरुषचरित, 3.248.
5. मिताक्षरा, पृ. 249.
6. गोपाल, लल्लनजी : द इकोनामिक लाइफ ऑफ नादर्न इण्डिया, पृ. 71-72.
1. स्मिथ : अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृ. 403.
8. वही, पृ. 409.
9. प्रबोध चंद्रोदय, पृ. 125.
10. मानसोल्लास, 1, अ. 2. 62, पृ. 7.
1. मेघातिथि, टीका मनुस्मृति, 8, 416.
12. लेखपद्धति, पृ. 45.
13. जैन, पी.सी. : लेवर इन एंशियेण्ट इण्डिया, प्र. 153.
14. वही, पृ. 48.
15. लल्लनजी गोपाल, वही, पृ. 73.